नागौर के जैन मन्दिर और दादावाड़ी

□श्री भंवरलाल नाहटा

[द्वारा : अभय जैन ग्रन्थालय,

नाहटों की गवाड़, बीकानेर (राज०)]

राजस्थान के ऐतिहासिक और प्राचीनतम नगरों में नागौर शहर का भी प्रमुख स्थान है। संस्कृत ग्रन्थों में एवं अभिलेखों में व्यवहृत 'अहिपुर' और 'नागपुर' शब्द इसी के पर्याय हैं। इस परगने के खींवसर, कडलू (कुटिलकूप), डेह, रुण, कूचेरा (कूर्चपुर), भदाणा, सूरपुरा, ओस्तरां आदि संख्याबद्ध ग्रामों का इतिहास अनेकों वीर, धर्मिष्ठ और साधुजनों की ज्ञात-अज्ञात कीर्ति-गाथाओं से संपृक्त है। प्राचीनकाल में इस परगने को 'सपादलक्ष' या 'सवालक' देश के नाम से पुकारा जाता था। यहाँ की राज्यसत्ता कई बार मुस्लिम शासकों के हाथों में आई और परिणामतः नाना प्रकार के पट परिवर्तन हुए। कभी यह राज्य अपने पड़ौसी बीकानेर, जोधपुर राज्यों के साथ युद्धरत रहा और कभी मित्र रहा। कभी इसकी स्वतन्त्र सत्ता भी रही और चिरकाल तक जोधपुर राज्यान्तर्गत भी। अतः तोड़-फोड़ और नव-निर्माण के अनेक झौंके सहते हुए इस नगर के अपनी प्राचीन स्थापत्यकला व पुरातत्त्व सामग्री को विशृंखल कर डाला। यही कारण है कि नागौर का कोई देवालय १५वीं शती से प्राचीन नहीं पाया जाता। जनरल कनिंघम ने लिखा है कि बादशाह औरंगजेब ने जितने मन्दिर यहाँ तोड़े उनसे भी अधिक मस्जिदें राजा बख्तसिंह ने तोड़ी। यही कारण है कि यहाँ कई फारसी लेख शहरपनाह की चुनाई में उल्टे-सुल्टे लगे हुए आज भी विद्यमान हैं।

गुजरात के सुलतान मुजफ्फरखाँ ने अपने भाई शम्सखाँ को नागौर की जागीर दी थी, जिसने यहाँ अपने नाम से शम्स मस्जिद और तालाब बनवाये तथा उसके पुत्र फिरोजखाँ ने नागौर का स्वामी होकर एक बड़ी मस्जिद का निर्माण करवाया जिसको महाराणा कुम्भा ने नागौर विजय करते समय नष्ट कर डाला था।

नागौर में बहुत से हिन्दू और जैन मन्दिर हैं। हिन्दू मन्दिरों में वरमाया योगिनी का मन्दिर प्राचीन है, जिसके स्तम्भों पर सुन्दर खुदाई का कार्य है। सं० १६१८ और इसके सं०१६५९ के दो लेख बच पाये हैं। प्राचीनता और विशालता की दृष्टि से बंशीवाला मन्दिर महत्त्वपूर्ण है। विमलेश्वर शिव और मुरलीधरजी के मन्दिर की मध्यवर्ती दीवाल पर ११ श्लोक तथा ८ पंक्तियों में गद्य अभिलेख भी खुदा है। इस विषय में विशेष जानने के लिए मेरा "नागौर के बंशीवाला मन्दिर की प्रशस्ति" शीर्षक लेख (विशम्भरा वर्ष ४, अंक १-२) देखना चाहिए।

नागौर से जैन धर्म का सम्बन्ध अतिप्राचीनकाल से है। ओसवाल जाति का नागौरी गोत्र एवं नागपुरीय तपागच्छ (पायचंद गच्छ) व नागौरी लूंकागच्छ भी इसी नगर के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त हैं। यहाँ धर्मघोषगच्छ का भी अच्छा प्रभाव था, कुछ वर्ष पूर्व तक उस गच्छ के महात्मा पौशाल में रहते थे। दिगम्बर समाज की भट्टारकों की गद्दी होने से वहाँ बड़ा समृद्ध ज्ञान-भण्डार भी है जिसमें अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का संग्रह है तथा कई दिगम्बर जैन मन्दिर भी हैं। यहाँ के भट्टारक श्री देवेन्द्रकीर्तिजी कुछ वर्ष पूर्व अच्छे विद्वान् हुए हैं। ज्ञानभण्डार में लगभग १२ हजार ग्रन्थों का बहुमूल्य संग्रह है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नागौर में ओसवाल श्वेताम्बर जैन एवं दिगम्बर जैनों की अच्छी बस्ती है। ओसवालों का सुराणा वंश यहीं से सम्बन्धित है और बाद में बीकानेर आदि में गया। सुराणाओं की कुलदेवी सुसाणी देवी का मन्दिर तो सोलहवीं शती का मोरखाणा में है जिससे सम्बन्धी दन्त कथाएँ नागौर के नवाब से सम्बन्धित हैं, पर वहाँ का ११२९ संवत् का लेख उस कुलदेवी को मुसलमानों के आगमन से पूर्व की प्रमाणित करता है, अस्तु। भारत के इतिहास में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करने वाले सुप्रसिद्ध जगतसेठ के पूर्वज यहीं के अधिवासी थे।

जैन साहित्य के परिशीलन से नौवीं-दशवीं शताब्दी से जैन धर्म का नागौर से विशिष्ट सम्बन्ध प्रमाणित है। जैन श्रमण कृष्णर्षि और जयसिंहसूरि के उल्लेख सर्वप्राचीन हैं। श्री जयसिंहसूरि ने सं० ९१५ में नागौर में ही 'धर्मोपदेशमाला-विवरण' की रचना की और कृष्णर्षि ने सं ९१७ में नारायण वसति महावीर जिनालय को प्रतिष्ठित किया था। उस समय नागौर में पहले से ही अनेक जिनालय विद्यमान थे, ऐसा उल्लेख "नागउराइसु जिनमंदिराणि जायाणिणेग्यणि" वाक्यों से धर्मोपदेशमाला विवरण में किया है। यहाँ के नारायण श्रेष्ठि को प्रतिबोध देने वाले जैन मुनि कृष्णर्षि थे। श्री कुमारपाल चरित्र महाकाव्य प्रशस्ति में इसका उल्लेख इस प्रकार पाया जाता है—

श्रीमन्नागपुरे पुरा निजगिरा नारायणश्रेष्ठितो
निर्माच्योत्तमचैत्यमन्तिम जिनं तत्र प्रतिष्ठाप्य च।
श्रीवीरान्तव-चन्द्र-सप्त (९१७) शरदि श्वेतेषु तिथ्यां शुचौ
बंभाद्यात् समातिष्ठ यत् स मुनिराट् द्वासप्ततिं गोष्टिकान्॥

इस श्लोक से विदित होता है कि नारायणवसति की स्थापना के समय ७२ गोष्ठी—ट्रस्टी नियुक्त किये गये थे। अतः उस समय यहाँ जैनों की अच्छी बस्ती होना प्रमाणित है। उपकेशगच्छ प्रबन्ध के अनुसार इसकी प्रतिष्ठा कृष्णर्षि की आज्ञा से गुजरात से देवगुप्तसूरि को बुलाकर करवायी गई थी। चौदहवीं शताब्दी के स्तवनों में प्रस्तुत नारायणवसति को 'कन्हरिषीवसति' नाम से भी सम्बोधित किया है। सतरहवीं शताब्दी में यह नारायणवसति महावीर जिनालय 'जीर्ण जिणहर' बतलाया गया है। उपकेशगच्छ-प्रबन्ध में इसकी स्थिति कोट के स्थान में लिखी है। अब कोई भी प्राचीन जिनालय के अवशेष वहाँ नहीं मिलते।

खरतरगच्छ युगप्रधानाचार्य गुर्वावली के अनुसार नागौर में श्रावकसंघ ने श्री नेमिनाथ भगवान के जिनालय और प्रतिमा का निर्माण कराकर उसकी प्रतिष्ठा श्री जिनवल्लभसूरिजी महाराज के करकमलों से कराई थी, यह मन्दिर कब लुप्त हो गया, पता नहीं।

सं० १३५२ के आसपास श्री पद्मानन्दसूरि के समय में हरिकलश ने 'नागौरचैत्य परिपाटी' गा० ९ और स्तुति गा० ४ की रची थी जिन्हें मैंने 'कुशल-निर्देश' वर्ष ४ अंक ५ में प्रकाशित की है। इन दोनों में नागौर के ७ जिनालयों का उल्लेख है। यद्यपि विवरणवार देखा जाय तो तीर्थंकरों के नाम आदि से संख्या अधिक हो जाती है परन्तु अवान्तर देवकुलिकाएँ तथा अपरनाम, निर्मातानाम एवं इतर देहरियों की प्रतिमाओं को मूलनायकरूप समझकर समन्वय किया जा सकता है। स्तुति संज्ञक रचना में पार्श्वनाथ चौवीसटा, ४ महावीरस्वामी व २ चन्द्रप्रभ जिनालय—इन सात जिनालयों में ऋषभदेवादि अन्य प्रतिमाएँ होना लिखा है। चैत्य परपाटी के अनुसार इस प्रकार है—

चौवीसटा बड़ा मन्दिर है जिसमें मन्त्री तिहुंराय कारित सुराणा वसही में भ० पार्श्वनाथ, नाहर-विहार में शान्तिनाथ और श्रीसंघ के भवन में मल्लिनाथ हैं। डीडिग वसही सूरह कुल-सुराणों की निर्मापित है जिसमें चौकी, मण्डप और संबल स्तंभ हैं। चउवीसवट्टय (चतुर्विंशति पट्टक) पीतल-धातुमय तोरण परिकर युक्त है। चौवीस भगवान, महावीरस्वामी और चन्द्रप्रभुजी के बाद कन्हरिषि (नारायणवसति), छजलानी, उच्छित्तवाल—इन तीनों मन्दिरों में महावीर स्वामी है। आदीश्वर जिनालय के गोष्टी ओसवाल (गच्छ उपकेश) है और चन्द्रप्रभ का उल्लेख है। इन दोनों को (आदीश्वर को) चन्द्रप्रभ के अन्तर्गत मान लेने से सातों मन्दिरों का समन्वय हो जाता है तथा जीर्णोद्धार केसमय मूलनायक परिवर्तन भी हो सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सतरहवीं शताब्दी में कवि विशाल सुन्दर के शिष्य ने जिन सात मन्दिरों का वर्णन किया है, वे इस प्रकार हैं—१. शान्तिनाथ-पित्तलमय प्रतिमा, समवशरण, २. आदिनाथ, ३. पित्तलमय महावीर स्वामी ४-५. ऋषभदेव, ६. पार्श्वनाथ और ७. महावीर जिनालय (प्राचीन नारायणवसही)। सं० १६६३ में रचित अंजना चौपाई में कवि विमलचारित्र ने नागौर के सात मन्दिर आदिनाथ, शांतिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी के लिखे हैं। इसके पन्द्रह वर्ष पश्चात् कवि पुण्यरुचिकृत स्तवन में, जो सं० १६७८ में रचित है, नागौर में नौ मन्दियों का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार हैं—१. ऋषभदेव, २, मुनिसुव्रत, ३. शान्तिनाथ, ४. आदिनाथ (हीरावाड़ी), ५. वीरजिन, ६. आदिनाथ, ७. आदिनाथ, ८. पार्श्वनाथ. ९. वीरजिनेश्वर। इन नौ मन्दिरों में मुनिसुव्रत और आदिनाथ दो नव निर्मित हुए हों, ऐसा संभव है। महावीर स्वामी के चार मन्दिरों में सतरहवीं शताब्दी में दो रह जाते हैं और आदिनाथ भगवान के दो बढ़ जाते हैं। चौदहवीं शती के पश्चात् किसी समय शान्तिनाथ जिनालय का निर्माण हुआ प्रतीत होता है क्योंकि हम नाहर-विहार के शान्तिनाथ को अवान्तर में ले चुके हैं। जो भी हो, नागौर के मन्दिरों का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन होना आवश्यक है। सतरहवीं शताब्दी के मन्दिरों का वर्णन वर्तमान स्थिति से मेल खाना कठिन है। श्री आनंदजी कल्याणजी की पेढ़ी से प्रकाशित 'जैन तीर्थ सर्वसंग्रह' भाग १ में नागौर के मन्दिरों का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

आज भी नागौर में सात मन्दिर ये हैं— १. ग्रामबाहर गुंबज वाले मन्दिर में मूलनायक सुमतिनाथ स्वामी की प्रतिमा है। इसमें सुन्दर चित्रकारी की हुई है। सं० १९३२ में यतिवर्य रूपचंदजी ने इस मन्दिर का निमार्ण कराया था, इसमें प्राचीन पुस्तक भण्डार है। २. घोड़ावतों की पोल में गुंबजबद्ध श्री शांतिनाथ भगवान का मन्दिर है जिसे सं० १५१५ में घोड़ावत आसकरण ने बनवाया है। इसमें सं० १२१६ की प्राचीन धातु प्रतिमा है और ४४ इंच का धातुमय समवशरण भी दर्शनीय है। ३· दफ्तरियों की गली में आदिनाथ भगवान का शिखरबद्ध जिनालय है जिसे सं० १६७४ में सुराणा रायसिंह ने बनवाया था, मूलनायक प्रतिमा पर सं० १६७४ का लेख है। ४. इसी गली में सुराणा रायसिंह द्वारा निर्मापित आदिनाथ भगवान का गुंबज वाला जिनालय है। ५. हीरावाड़ी में आदिनाथ भगवान का गुंबजवाला मन्दिर सं० १५९६ के श्रीसंघ ने निर्माण कराया था, इसी संवत् का लेख प्रतिमा पर है। ६. बड़ा मन्दिर नाम के स्थान में आदिनाथ भगवान का सोलहवीं शताब्दी का जिनालय है, इसमें काँच का सुन्दर काम किया हुआ है और धातु व पाषाणमय सुन्दर प्रतिमाएँ हैं। ७. स्टेशन के पास श्री चन्द्रप्रभ भगवान का शिखरबद्ध जिनालय जैनधर्मशाला में है। सं० १९९३ में श्रीकानमलजी समदड़िया ने बनवाया है। मूलनायक प्रतिमा पर इस संवत् का लेख है।

उपर्युक्त उल्लेख में हीरावाड़ी का मन्दिर सं० १५९६ का लिखा है पर मैंने इस मन्दिर के गर्भगृह पर बारहवीं शताब्दी का एक चूने में दबा हुआ लेख लगभग ३५ वर्ष पढ़ा था। संभवतः जीर्णोद्धार के समय मूलनायक १५९६ के विराजमान किये गये थे।

सं० १५९३ में नागौर में उपकेशगच्छीय श्री सिद्धसूरिजी ने प्रतिष्ठा कराई थी। मिती आषाढ़ सुदि ४ को प्रतिष्ठित प्रतिमा देशणोक के मन्दिर में है। इसी प्रकार सं० १५५९ मिगसर बदि ५ प्रतिष्ठित (श्री देवगुप्तसूरि द्वारा) हनुमान के मन्दिर में है एवं इसी संवत् की हेमविमलसूरि प्रतिष्ठित सुविधिनाथ प्रतिमा का लेख नाहर ले० ५८० में प्रकाशित है। सं० १५३४ में शीतलनाथ प्रतिमा हीरावाड़ी नागौर के आदिनाथ मन्दिर में है तथा सं० १४८३ में देवलवाड़ा-मेवाड़ के आदिनाथ जिनालय में नागौर वालों ने देवकुलिका बनवाई थी (नाहर लेखांक १९८९)। सं० १८४१ अक्षयतृतीया के दिन श्री सुन्दर शि० स्वरूपचन्द्र द्वारा प्रतिष्ठित सिद्धचक्र यंत्र केशरियाजी के मन्दिर, जोधपुर में है। नाहरजी ने अपने जैनलेख संग्रह दूसरे भाग के लेखांक १२३३ से १३२९ तक नागौर के चार मन्दिरों के लेख प्रकाशित किये हैं।

प्रभावकचरित्रगत वीराचार्य प्रबन्ध से नागौर में धर्मप्रभावना करने का तथा श्री वादिदेवसूरि प्रबन्ध से बहाँ दिगम्बर गुणचन्द्र को वाद में पराजित करने तथा फिर एक बार नागौर पधारने पर आल्हादन नरेश्वर के वन्दनार्थ आने और भागवताचार्य देवबोध के साथ आकर अभिनन्दित करने का उल्लेख है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नागौर में खरतरगच्छ विधि मार्ग का मन्दिर निर्माण श्री जिनवल्लभसूरिजी के समय में हुआ था और उन्होंने उनको गुरु मानकर उन्हीं के करकमलों से श्री नेमिनाथ स्वामी की प्रतिष्ठा शुभ मुहूर्त में करवाई थी। देवालय निर्मापक सेठ धनदेव के पुत्र कवि पद्मानन्द ने अपने वैराग्यशतक में इस प्रकार उल्लेख किया है—

सिक्तः श्रीजिनवल्लभस्य सुगुरोः शान्तोपदेशामृतैः।
श्रीमन्नागपुरे चकार सदनं श्रीनेमिनाथस्य यः॥
श्रेष्ठी श्रीधनदेव इत्यभिधया ख्यातश्च तस्याङ्गजः।
पद्मानन्दशतं व्यधत्त सुधियामानन्दसम्पत्तये॥

इस पुण्य-कार्य के प्रभाव से वहाँ के सभी श्रावक लक्षाधीश हो गये। उन्होंने भगवान नेमिनाथ की प्रतिमा के रत्नजटित आभूषण बनवाये। इस मन्दिर में महाराज ने रात्रि में भगवान के भेंट चढ़ाना, रात्रि में स्त्रियों का आगमन आदि निषेध के लिए शिलालेख रूप में विधि लिखवा दी थी जिसे 'मुक्तिसाधक-विधि' नाम से कहा है। इसके बाद श्री जिनवल्लभगणि विक्रमपुर मरोट आदि स्थानों में विचरणकर पुनः नागौर पधारे थे।

श्री जिनवल्लभसूरि के पट्ट पर विराजमान होने के पश्चात् श्री जिनदत्तसूरिजी स्व० श्रीहरिसिंहाचार्यजी का आदेश प्राप्त कर मारवाड़ की ओर पधारे। नागौर पहुँचने पर वहाँ के मुख्य सेठ धनदेव ने सूरिजी की महान् प्रतिभा देखकर निवेदन किया कि यदि आप व्याख्यान में 'आयतन-अनायतन' का विषय छोड़ दें तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि सभी श्रावक आपके आज्ञाकारी बन जायँ। पर गुरुदेव ने उत्सूत्र भाषण स्वीकार नहीं किया।

श्री जिनदत्तसूरिजी से प्रतिबोध प्राप्त श्रावक देवधर चैत्यवासी देवाचार्य के देवगृह में गया तो उसने उनके साथ चर्चा करके विधि मार्ग का समर्थन स्वीकार कराया और लोकप्रवाद के विरोध की असमर्थता पाकर चैत्यवासियों को अन्तिम नमस्कार कर अजमेर गया था।

श्री जिनचंद्रसूरि (कलिकाल केवली) के समय सं० १३५३ में निकले संघ में नागौर, रूण आदि के धनी-मानी श्रावक भी सम्मिलित हुए थे। सं० १३७१ में जालौर में अनेक उत्सवादि होने के पश्चात् म्लेच्छों द्वारा जालौर भंग होने पर सपादलक्षदेश पधारे उस समय ३०० गाड़ों के झुंड के साथ फलौदी पार्श्वनाथजी की यात्रा करके नागौर पधारे थे।

सं० १३७५ में दूसरी बार फलौधी तीर्थ की यात्रा कर जब श्री जिनचन्द्रसूरि जी नागौर पधारे तो मिती माघ शुक्ला १२ को अपने पट्टशिष्य कुशलकीर्ति (श्री जिनकुशलसूरि) को वाचनाचार्य पद से अलंकृत किया था। इस समय कई दीक्षाएं आदि उत्सव हुए थे। नागौर के श्रावकों की प्रार्थना से नागौर में नंदिमहोत्सव किया गया। यहाँ के मंत्रिदलीय ठा० विजयसिंह, ठा० सेहू, सा० रूपा आदि ने दिल्ली, डालामर, कन्यानयन, आशिका, नरभट, वागड़देश, कोसवाड़ा, जालौर, समियाना आदि के एकत्र संघ की बड़ी भक्ति की। जगह-जगह अन्नक्षेत्र खोले गए। धनवान श्रावकों ने सोने-चाँदी कड़े के अन्न-वस्त्रादि खूब बाँटे। साधु सोमचन्द्र और शीलसमृद्धि, दुर्लभसमृद्धि, भुवनसमृद्धि साध्वियों को दीक्षित किया। पं० जगत्चन्द्र गणि और पं० कुलशलकीर्ति को वाचनाचार्य पद से अलंकृत किया। धर्मपाल गणिनी और पुण्यसुन्दरी गणिनी को प्रवर्तिनी पद दिया गया। श्री तरुणप्रभसूरिकृत श्री जिनकुशलसूरि चहुत्तरी में वाचनार्य पद प्रदान का उल्लेख इस प्रकार है—

तं गच्छलच्छिजुग्गं माऊणं नायपुरजिणहरंमि।
तेरपणसयरि वरिसे माहेसिय बारसी दिवसे॥४४॥
पउर सिरिसंघ मेले सिरिजिणचंदेण सूरिणा तस्स।
हरिसा तियहत्थेणं वाणारियसंपया दत्ता॥४५॥

मिती वैशाख बदि ८ को पुनः श्री जिनचन्द्रसूरिजी नागौर पधारे। वहाँ पर अनेक उज्ज्वल कर्मों से अपने कुल का उद्धार करने वाले धनी-मानी मंत्रिदलीय श्रावक अचलसिंह ने बादशाह कुतुबुद्दीन से फरमान प्राप्त कर तीर्थयात्रा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का संघ निकाला जिसमें अनेक देश-ग्रामों के संघ को आमन्त्रित किया गया था। इसमें आचार्यश्री जयदेवगणि, पद्मकीर्तिगणि, अमृतचन्द्रगणि आदि ८ साधु और जयद्धि महत्तरा आदि चतुर्विध संघ ने देवालय के साथ बड़े ठाठ से प्रयाण किया था।

सं० १३८० में दिल्ली के सेठ रयपति के संघ में नागौर के सेठ लखमसिंह आदि संघ सहित विशाल यात्री-संघ में सम्मिलित हुआ था।

श्री जिनकुशलसूरिजी के शिष्य और जिनपद्मसूरिजी के पट्टधर श्री जिनलब्धिसूरिजी, जो सिद्धान्तज्ञ-शिरोमणि और अष्टावधानी थे, सं० १४०६ में आपका नागौर में ही स्वर्गवास हुआ था जिसके पट्ट पर सं० १४०६ माघ सुदि १० के दिन नागौर निवासी श्री मालवंशीय राखेचा साह हाथी कारित उत्सवपूर्वक जेसलमेर में श्री जिनचन्द्रसूरिजी विराजमान हुए। आपके पट्टधर श्री जिनोदयसूरिजी के विज्ञप्ति-महालेख के अनुसार नागौर से दो लेख लोकहिताचार्य को अयोध्या भेजे थे जिनमें नागौर में मोहन श्रावक द्वारा मालारोपण उत्सव करवाये जाने का उल्लेख किया गया था।

श्री जिनभद्रसूरि अपने समय के एक महान् प्रभावक आचार्य थे। उन्होंने सात स्थानों में ज्ञान-भण्डार स्थापित किये थे जिसमें कितने ही प्राचीन और नवीन ग्रन्थों को लिखवाकर रखा गया था। नागौर में भी ज्ञान-भण्डार स्थापित करने के उल्लेख पाये जाते हैं।

युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी महाराज सं० १६२२ में बीकानेर से जेसलमेर जाते हुए नागौर पधारे। उन दिनों संभवतः नागौर मुगलों के अधिकार में था और वहाँ का शासक हसनकुलीखान था जिसके साथ बीकानेर के मंत्री संग्रामसिंह वच्छावत ने संधि की थी। जिनचन्द्रसूरि विहार पत्र के उल्लेखानुसार हसनकुलीखान द्वारा प्रवेशोत्सव कराने का 'बिचि नागौर हसनकुलीखान जय लाभपइसारउ' लिखा है।

सं० १६२३ मिती माघ बदि ५ को नागौर दादाबाड़ी में श्री जिनकुशलसूरिजी के चरण पादुके प्रतिष्ठित कराये गये थे। सं० १६४७ में सम्राट के आमन्त्रण से खंभात से लाहौर जाते हुए युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिजी नागौर पाधारे थे। यहाँ के मन्त्रीश्वर मेहा ने बड़ी धूमधाम के साथ सूरिजी का प्रवेशोत्सव कराया था और गुरुमहाराज को वन्दनार्थ बीकानेर का संघ आया जिसके साथ ३०० सिजवाला और ४०० वाहन थे। वह संघ स्वधर्मीवात्सल्यादि करके वापस लौटा। श्री जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोधरास का आवश्यक अंश यहाँ दिया जा रहा है—

हिव नगर नागोरउरइं आया श्री गच्छराज।
वाजित्र बहु हय गय मेली श्रीसंघ साज॥
आवी पद वंदी करइ हम उत्तम काज।
जउपूज्य पधार्या तउसरिया सब काज॥७५॥
मन्त्रीसर वांदइ मेहइ मन नइ रंग।
पइसारउ सारउ कीधउ अति उछरंग॥
गुरु दरसण देखी वधियो हर्षकलोल।
महियलिजस व्यापिउ आपिउ वर तंबोल॥७६॥
गुरु आगम ततखिण प्रगटिउ पुण्य पडूर।
संघ बीकानेरउ आविउ संघ सनूर॥
त्रिणसउ सिजवाला प्रवहण सइं वालि चार।
धन खरचइ भवियण भावइवर नर नारि॥७७॥

समयसुन्दरजी महाराज स्वयं नागौर में विचरे हैं और यहीं पर सं० १६८२ में सुप्रसिद्ध शत्रुंजयरास की रचना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की थी। एक वार आप नागौर पधारे तब वहाँ के श्रावकों में परस्पर कलह का वातावरण चल रहा था। आपने अपने व्याख्यान में स्वयं रचित क्षमाछत्तीसी की व्याख्या द्वारा उपदेश देकर कलह मिटाया जिसका वर्णन क्षमाछत्तीसी की प्रशस्ति हैं—

नगर मांहि नागौर नगीनउ, जिहाँ जिनवर प्रासादजी।
श्रावक लोग वसइ अति सुखीया, धर्म तणइ परसादजी ॥३४॥
क्षमा छत्तीसी खांते कीधी, आतप पर उपगार जी।
सांभलतां श्रावक पण समज्या, उपसम धरयउ अपारजी ॥३५॥

श्री जिनसागरसूरि अष्टक में भी अपने "श्री जावालपुरे च योधनगरे श्रीनागपुर्या पुनः" वाक्यों द्वारा नागौर का उल्लेख किया है।

श्री जिनलाभसूरिजी महाराज सं० १८१५ में बीकानेर से विहार करके पधारे और १८ वर्ष पर्यन्त बाहर ही विचरे। जब आप नागौर आये तब बीकानेर वाले आश लगाए बैठे थे पर आप वहाँ से साचौर पधार गए। यतः—

अटकलता आसी अवास, निरख विचै नागौर।
पिण मन वसीयो पूजरै, सहिर भलौ साचौर ॥२२॥

इस प्रकार प्राचीन साहित्य के परिशीलन से नागौर में जैनाचार्यों के विचरण करने का उल्लेख पाया जाता है और साधु-यतियों व साध्वियों के चातुर्मास बराबर होते ही आये हैं। नागौर में चातुर्मास के समय विद्वान मुनियों ने अनेक ग्रन्थों की रचना की है, जिसकी कुछ सूची इस प्रकार है—

सं० १६३२ में कवि कनकसोम ने जिनपालित जिनरक्षित रास की रचना की। सं० १६३६ मा० सु० ५ साधुकीर्तिजी ने नमिराजर्षि चौ० की रचना की। सं १६४५ में श्रीवल्लभ उपाध्याय ने शीलोंछ नाममाला, सं० १६५५ में कनकसोम कवि ने थावच्चा सुकोशल चरित्र, सं० १६५९ में सूरचंद्रगणि (वीरकलश शि०) ने शृंगाररसमाला, सं० १६७३ में विद्यासागर (सुमतिकल्लोल शि०) ने कलावती चौपई, सं० १६८२ में समयसुन्दरजी ने शत्रुं-जयरास, सं० १६६८ में सहजकीर्ति (हेमनन्दन शि०) से व्यसन सत्तरी, सं० १६८४ में पुण्यकीर्ति (हंसप्रमोद शि०) ने मोहछत्तीसी, सं० १७३२ में मतिरत्न शि० समयमाणिक्य (समरथ) ने मत्स्योदर चौपई रची है। सुखनिधान शि० महिमामेरु ने नेमिनाथफाग और समयसुन्दरजी ने क्षमाछत्तीसी की रचना की है। सं० १८१७ में रायचंद ने क्षवयदी शकुनावली, सं० १८२२ में दीपचंद शि० कर्मचन्द्र ने तर्कसंग्रह पदार्थ बोधिनी टीका, सं० १८९६ में सुमतिवर्द्धन के शिष्य चारित्र-सागर ने साधुविधि प्रकाशभाषा का निर्माण किया। सं० १९५२ में द्वितीय चिदानंदजी महाराज ने "आत्मभ्रमोच्छेदन भानु" ग्रन्थ की रचना की थी।

महान् प्रतापी मुनिराजश्री मोहनलालजी महाराज नागौर के यति श्री रूपचन्दजी के पास सं० १९०० में दीक्षित हुए थे और ३० वर्ष पर्यन्त यति पर्याय में रहकर सं० १९३० में क्रियोद्धार किया था। आप बड़े समभावी थे और आपका शिष्य परिवार खरतरगच्छ व तपागच्छ दोनों में सुशोभित है।

दादावाड़ी

नागौर का दादावाड़ी अति प्राचीन है। श्री जिनकुशलसूरिजी के प्रपट्टधर श्री जिनलब्धिसूरिजी के स्वर्गवास के समय सं० १४०६ में अवश्य निर्मित हुई होगी, पर चरणपादुका इतनी प्राचीन उपलब्ध नहीं है। सं० १६२३ में प्रतिष्ठा होने का लेख श्री हरिसागरिसूरजी के लेखसंग्रह में है। इसके पश्चात् सं० १७७५ में पं० गजानन्द मुनि के उपदेश से खरतरगच्छ संघ ने जीर्णोद्धार कराया था जिसका अभिलेख इस प्रकार है—

"संवत् १७७५ वर्षे शाके प्रवर्तमाने मासोत्तम मासे द्वितीय श्रावण मासे शुक्लपक्षे १२ तिथौ गुरुवारे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खरतरगच्छभट्टारक गच्छे श्रीजिनसुखसूरि शिष्यांग प्रा श्री श्रीकीर्तिवर्द्धनजी गणि पं० प्र० श्री इलाधनजी गणि पं० प्र० श्री विनीतसुन्दरजी गणि तच्छिष्य पं० गजानन्द मुनि उपदेशात् श्री खरतरगच्छसंघेन दादा श्री जिनकुशल-सूरिणा का जीर्णोद्धार करवाया।"

इसके बाद संवत् १८८२ में भी जीर्णोद्धार हुआ था। यह स्थान नौ छत्रियाँ नाम से विख्यात है और अब तो वहाँ भगवान महावीर स्वामी के मन्दिर का निर्माण हो जाने से दिनोंदिन उन्नति की ओर अग्रसर है।

प्रसिद्ध दादावाड़ियों की नामावली जो स्तवनों में मिलती है उनमें नागौर की दादावाड़ी की स्तुति बड़ी भक्ति-प्रवणता के साथ की गई है।

१. सतरहवीं शती के उ० साधुकीर्तिजी के सुप्रसिद्ध "विलसे ऋद्धि" स्तवना में—

"शुभसकल परचा पूरे, श्रीनागपुरे संकट चूरे"

२. राजसागरकृत जिनकुशलसूरिस्तवन में—

"अरे लाल जोधपुर नै मेड़तै जैतारण ने नागोर रे लाल
सोजत नै पालीपुरै जालोर ने श्री साचोर रे लाल"

३. अभयसोम कृत जिनकुशलसूरिछन्द (गा० ३२) में—

"प्रभावना रिणीपुरै निसाण वाजता घुरै।
भेटो नयर भट्टनेर जगत्रय सहु हवेजेर ॥१८॥
"नागोर नाम दीपतौ दाणव देव जीपतो।
तोरण तेम सोहए जगत्र मन मोहए ॥१९॥"

४. उदयरत्नकृत स्तवन (गा० १७) में—

"जो हो अहिपुर आस्या पूरै जो हो सोजित मांहे सुविचारजी ॥११॥"

५. खुश्यालकृत (सं० १८२३) जिनकुशलसूरि छंद (गा० ७९) में—

"नागौरै नमंत पाय जाय व्याधि नाम ए।
वीकाणे पुर दीयंत कीध माल वाम ए ॥५६॥"

६. जयचन्दकृत जिनकुशलसूरि छन्द में—

"नागौर नगीनो सहु जन लीनो व्यंतर भूत भगंदा हे।
जो धन नर नारी उठ सवारी जाके पाय नमंदा हे।"

७. उपाध्याय क्षमाकल्याण गणि कृत श्री जिनकुशलसूरिस्तोत्र (गा० २२) में—

"नागोरै योधपुर्य्यामुदयपुररिणो सोजिताख्यासुपुर्षः।
पल्लीपुर्यां तिमर्य्यां ममररारसि वा मेडता लाडपुर्य्याम् ॥"

८. ललितकीर्ति शि० राजहर्ष कृत जिनकुशलसूरि अष्टोत्तर शतस्थाने स्तुंभ नाम गर्भित स्त० (गा०-२९) में—

"जेसलमेर सकल जोधाणइ, नागोरइं प्रणमइ नर वृंद।
मेदनीतटइ देखी मन उल्हसइ, देवलवाड़इ जाणि दिणंद ॥४१॥"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. श्रीजिनराजसूरि कृत जिनकुशलसूरि स्तवन में—

"हो अहिपुरमांहे दीपतउ, दादा देराउर सुविशेष।
हो जेसलगिरिवर पूजियइ, दादा भाजइ दुख अशेष ॥५॥"

सुप्रसिद्ध कविवर समयसुन्दरोपाध्याय ने निम्नोक्त स्वतन्त्र स्तवन की रचना की है—

नागौर मण्डन श्री जिनकुशलसूरिगीतम्

उल्लट धरि अमे आविया दादा भेटण तोरा पाय।
बे कर जोड़ी वीनकुं दादा आरति दूरि गमाय ॥१॥
इण रे जगत में नागोर नगीनइ दादो नागतउ।
भाव भगति सुं भेटतां, भव दुख भागतउ ॥इण रे०॥ टेर॥
को केहनइ को केहनइ दादा भगत आराधइ देव।
मइं इकतारी आदरी दादा, एक करुं तोरी सेव ॥इण रे०॥२॥
सेवक दुखिया देखता दादा, साहिब सोभ न होय।
सेवक नइ सुखिया करइ दादा, साचो साहिब सोय ॥इण०॥३॥
श्रीजिनकुशलसूरीसरू दादा, चिन्ता आरति चूरि।
समयसुन्दर कहर माहरा दादा मनवंछित फल पूरि ॥इण०॥४॥

□

जानन्नपि च यः पापम् शक्तिमान् न नियच्छति।
ईशः सन् सोऽपि तेनैव कर्मणा सम्प्रयुज्यते ॥

—महाभारत, आदिपर्व १७९।११

जो मनुष्य शक्तिमान एवं समर्थ होते हुए भी आन-बूझकर पापाचार को नहीं रोकता, वह भी उसी पापकर्म से लिप्त हो जाता है।